यथार्थ का अवचेतन और व्यंग्य

(डॉ सरिता)

अभिव्यक्ति का यदि वैश्विक परिदृश्य में आकलन किया जाये तो इसका रूप वैविध्य मिलता है। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबन्ध, व्यंग्य आदि। अभिव्यक्ति की कला अपने आप में असाधारण होती है और यदि यह व्यंग्य हो तो असाधारण का कलात्मक होना लाजमी हो जाता है। समाज में होने वाली घटनाओं के प्रति हर लेखक संवेदनशील होता है और सभी उस एक घटना को अलग-अलग और प्रभावपूर्ण तरीके से प्रस्तुति देते हैं। व्यंग्य में भी इसी तरह का आग्रह होता है | इसमें मनुश्य के अवचेतन की भूमिका अहम होती है। उसके लिए सबसे ज्यादा आवश्यक होता है मन के अन्दर उठने वाले उद्वेलन को किस तरह व्याख्यायित करके पुनः प्रस्तुत किया जाये। व्यंग्य के निर्माण में यहीं रस्साकस्सी होती है। व्यंग्य विश्व की सभी भाशाओं में देखने को मिलता है। जहाँ तक हिन्दी साहित्य का सम्बन्ध है इसकी मूल रूप से शुरूआत भारतेन्दु युग में दिखाई देती है। ह-लांकि प्यंग्य समाज में तब भी था जब साहित्य की शुरूआत नहीं हुई थी, समाज में यह मौखिक रूप में सदैव विद्यमान रहा है. प्रहसन की अभिव्यक्तित का आग्रह समाज मेंहमेशा ही रहा है। अंग्रेजी साम्राज्य का विस्तार, आयातित संस्कृति और समाज में फैली रूढ़ियों और अंन्धविश्वास-इन सभी ने व्यंग्य की आधारभूमि का निर्माण किया | इस कालखण्ड को नस्तर की तरह प्रस्तुत करने में भारतेन्दु के अलावा प्रेमघन और प्रतापनारायण मिश्र ने अहम भूमिका निभाई। इन सभी ने लोकप्रचलित शैलियों के माध्यम से व्यंग्य को अनेक रंगों से भर दिया। इससे इस अवधारणा को भी पुश्टि

मिलती भारतेन्दु को अवचेतन की संस्कृति की गहरी समझ होने के साथ-साथ उसको व्यक्त करने की कला में पारंगत यहीं तक नहीं इसके लिए वो लक्षित समूह का भी चयन करते थे | व्यंग्य की ठेट और असरकारक शैली को वो ज्यादा पसंद करते थे। 'स्यापा' और गाली' शैली का भारतैन्दु सांस्कृतिकरण कर देते हैं जिससे ये शैलियां साहित्यिक रूप ले लेती हैं। रस इन शैलियों का लक्ष्य होता है। इस तरह के व्यंग्य का स्थायी भाव हमारे अवच्चेतन में हमेशा बना रहता है। अपनी बात को कहकर मुकर जाने के आधार पर वो 'नये जमाने ही बकरी की रचना करते हैं| दरअसल, ये उस समय अभिव्यक्ति के नये भाध्यम थे और समाज को इनकी जरूरत भी थी। यही माध्यम बाद में विदेशी सत्ता से लड़ने का हथियार भी बने | प्रतापनरायण मिश्र और प्रेमघन ने इस काल में इस विधा को और अधिक ऊर्जा से भर दिया। व्यंग्य में विनोदपूर्ण प्रवृति का जो आरम्भ भारतेन्दु के यहां दिखाई देता है उसकी गति प्रतापनारायाण मिश्र के 'तृप्यान्ताम्, हरगंगा', बुढ़ापा और. 'ककाराश्टक आदि हास्य व्यंग्यात्मढ कविताओं में देखी जा सकती है | मारतीय और .' पाश्चात्य रीतियों का अधानुकरण ण और मानव मन के अन्तर्दन्द्व को हल्के-फुल्के.' अन्दाज में प्रस्तुति दी है। अं को त युवा पीढ़ी द्वारा भारतीय संस्कृति का त्याग. और विदेशी संस्कृति के प्रति आग्रह मिश्र जी को कचोटता है- | अनुचित और अभद्रता भारतीय परिवेश में स्वीकार्य नहीं है। उनके द्वारा किया गया तीखा प्रहार मात्र शाब्दिक नहीं है वे इसके माध्यम से भारतीय जन के अवधेतन को कुरेंदना चाहते कहने का तात्पर्य यह है कि इस कला के भाध्यम से सामाजिक सुधार की अपेक्षा भी की जाती है। कला का दायित्व जन उद्देश्यों से युक्त होता है। प्रख्यात आलोचक

अभिव्यक्ति का यह माध्यम आज भी उतनी तन्मयता से लिखा और सुना जाता है। जीवन में व्याप्त अमेक कुरीतियाँ और सत्ताजनित पाखण्ड, अन्याय, असामंजस्य ही व्यंग्यकार के मन असन्तोश पैदा करता है | असन्तोश की यह संवेदना मात्र कवि की नहीं है बल्कि पूरे राश्ट्र की है। हिन्दी साहित्य में द्विवेदी युग की पहचान

व्याकरणसम्मत विशुद्धता के कारण भी है, बावजूद इसके हास्य व्यंग्य की परम्परा मौजूद रही। महावीर प्रसाद द्विदेदी, व लमुकुन्द गुप्त, नाधूराम शर्मा शंकर, ईश्धरीप्रसाद शर्मा, जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी और यहाँ तक कि भैथिलीशरण गुप्त की रचनाओं में हास्य व्यंग्य दिखाई देता है। पलायनवाद, और औपचारिकता भरा जीवम कितना हास्यास्पद बन जाता है यह द्विवेदी जी के 'सरगो नरक ठेकाना नाहि' नामक व्यंग्य रचना में कल्लू अल्हैत के माध्यम से दिखाया गया है। फैशनपरस्ती, व्यमिचार, राजनैतिक शोशण जैसी अनेक कुरीतियाँ इनकी रचनाओं का विशय रही । शहर में रहने पर ग्रामीण का जीवन सहज नहीं रह पाता है। रहन-सहन, परिधान और सम्मोशण में बदलाव उसके लिए | आवश्यक्ष हो जाता है परन्तु यह सब व्यवहार से मेल नहीं खाता है। आदभी के मन में ईच्छा-अनिष्छा का अनाद्दनद्र हमेशा चलता रहता है | कवि का मानना है कि राहजता के अभुतार ही आदमी को विचार और वस्त्र धारण करने चाहिए | इस हारा को ड्वियेद्ि जी ने बड़े ही मनोविश्लेशणात्मक तरीके से व्यक्त किया है-- गालुदुच्द हुत्द गुप्त इस काल के प्रख्यात व्यंग्यकार हुए हैं। शिवशण्गु का चिल्ज', 'कर्जगाना' में समशानयिक प्रतिबद८्धता और राजगता का परिचय दिखाई देता है। तस समथ के वायसराय लार्ड कर्जन गुप्त जी के निशाने पर हमेशा रहते थे | विदेशी सत्ता क आदेशों से भारतीय जनता कितनी त्रत्त थी इसका जन्लेस्व इनकी स्थनाओं के अलावा और कहीं दिखाई नहीं देता है। वायसराय की हर बात के पीछे छिपे उद्देश्य को बालमुकुन्द गुप्त बड़े ही कलात्मक तरीके से प्रस्तुति देते हैं। एक बार लार्ड कर्जन ने भारत कौ जनता को झूठा कह कर सम्बोधित किया तो कवि अपनी रचना में उन पर तीखा प्रहार करते हैं-- प्रस्तुत रचना में सहज भाशा के प्रयोग के साथ कार्य- कारण की पूर्ण अभिव्यक्ति है। गुप्त जी यहीं तक सीमित नहीं रहते हैं 'कर्जनाना में वे कर्जन को उसके व्यवहार के कारण अपने मुंह मियां मिट्तू' कह कर उसे हास्य का पात्र बना डाला। बालमुकुन्द जी का मनोविज्ञान हमेशा ही उच्चे स्तर का रहा इस कारण से समाज और विचार के विश्लेशण को भी अभिव्यक्शि का रूप दे देले हैं। अप प् का सुख' में वे सुखी जीवन के तमाम उपकरण और उनके आग्रही के मन में पूरी के साथ | उतर जाते हैं। स्वार्थी, जूशामदी और विलासी लोगों के लिए सुख अन्य समाज के लिए कितना दुःख होता है। नाथूराम शर्मा 'शंकर' का "र्भरण्डा रहस्य'- उस समय शायद इसका तात्कालिक महत्व रहा होगा परन्तु हर युग मैं इसकी प्रासंगिकता सदैव बनी रहेगी। गर्भ में ही विधवा हो जाने वाली बालिका के माध्यम से कवि ने संवेदना के हर भर्म को झकझोर कर रख दिया है। शायद नाथूराम शर्मा द्विवेदी युग के अकेले ऐसे व्यंग्यकार थे जिनकी संवेदना का विस्तार व्यापक था | वे उन सामाजिक अपराधों को अपना विशय बनाते थे जिन्हें समाज में सामान्य तौर पर निरन्तरता के साथ वहन ब किया जाता था। इनका व्यंग्य असरकारक था और ये जनमानस की उक्त नस को स् सबसे पहले दबाते थे जिसमें सबसे ज्यादा दर्द हो सकता था। इसीलिए वो भगयान न कर्ण को जो सभी की आस्था का प्रतीक हैं पाश्धात्य वेशभूशा में दिखाने का साहस न करते है। द्विवेदी युग के बाद यह विधा निरन्तर अग्रसर होती हुई दिखाई देती है। मतवाला, 'गोलमाल, भूत, मौजी, मनोरंजन', 'चना चबेना आदि इस काल की सबसे धर्थित का रचनाएँ थी। यहाँ पर व्यंग्य में वैविध्य ही न हुआ और पाठक दर्ग की रूधियों में विधि ली बदलाव कराने में भी यह विधा सफल रही। बेधन शर्मा 'उग्र, बेठव बनारसी, या | और हरिऔध आदि ने अपनी व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से उन तमाम विशयों का स्पर्श किया जो हर रोज की जिन्दगी से झुड़े हुए थे। इस समय तक भाशा मी नये तेवर को ह अपना चुकी थी और कविजन भी हिन्दी और उर्दू का भरपूर प्रयोग करने सगे जो ठेठ अन्दाज में अपनी बात को विनोदपूर्ण हास्य को सहजता से ब्यान करती है। बेडय बनारसी अक्सर अभिव्यक्ष्ति में साहित्यिक भाशा ते अलगाव बनाकर रखते है उनका मानना है कि भावों का विश्लेशण नहीं उनकी सहज प्रस्तुति आवश्यक होती है-

प्यग्यकार हरिऔष ने 'चोखे चौपदे और 'चुभते-घौपदे' में विशय की संक्षिक्ाता को बग़ाव देते हैं ये भ्न्पूर्ण बात को दो था चार पॉक्तयों मे पूरे कथानक को जीवन्त कर आधुनिक कान में देखा गया है कि ध्यंग्य को भआानवीय करूणा के साथ अधिक जोड़कर प्रस्तुति दी गई है। निराला की 'कुकुरमुला' प्रभावशाली य्यंग्थ रचना रघना लाहै | अज्ञेय की 'सांप और नवानीप्रसाद मिश्र को गीतफरोश' हिन्दी साहित्य की सबसे तट हे बेहतरीन कालजयी व्यंग्य रचनायें है- यह गीतों की बढ़ती हुईं व्यवसायिकता पर करारा व्यंग्य है। लेखन कौ यह प्रवृति साहित्य के लिए खतरनाक है। हरिशंकर परसाई ने व्यंग्य की कला में व्यापक बदलाव किया। इसके लिए वो जनमानस को ही केन्द्र में रखकर विसंगतियों पर चोट करते हुए करारा व्यंग्य किया है।

निश्कर्श रूप से कहा जा सकता है कि व्यंग्य के लिए कोई सिद्धान्त नहीं है यह मनुश्य के अवधेतन के अवबोध पर अधिक निर्भर करता है। मन में समाज की अनुमूतियाँ सदैव रहती हैं लत प्रतिबद्ध €जाशए1अभिव्यक्ति ही उद्देश्य को नई ऊँचाई प्रदान करती है । व्यापक भरी हुई इस विधा को रचने वाला निश्चित रूप से अधिक जाग्रत और प्राणवंत रहता है तमी इतनी असाधारण रचना को रचने वह कामयाब हो पाता है।